संसाधन एवं विकास

क्या आप उन वस्तुओं का नाम बता सकते हैं जो गाँवों और शहरों में हमारे जीवन को आराम पहुँचाते हैं? ऐसी वस्तुओं की एक सूची तैयार करें और इनको बनाने में प्रयोग होने वाले पदार्थों का नाम बताएँ।

हमारे पर्यावरण में उपलब्ध प्रत्येक वस्तु जो हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने में प्रयुक्त की जा सकती है और जिसको बनाने के लिए प्रौद्योगिकी उपलब्ध है, जो आर्थिक रूप से संभाव्य और सांस्कृतिक रूप से मान्य है, एक 'संसाधन' है। हमारे पर्यावरण में उपलब्ध वस्तुओं

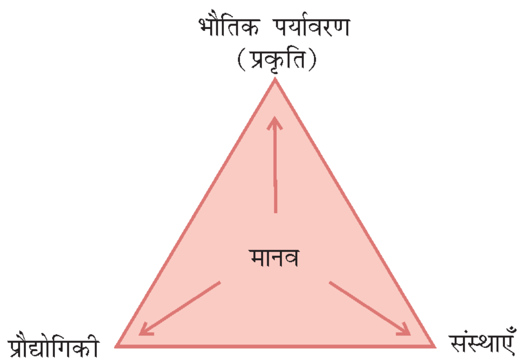

चित्र 1.1 – प्रकृति, प्रौद्योगिक और संस्थाओं के मध्य अंतर्संबंध

की रूपांतरण प्रक्रिया प्रकृति, प्रौद्योगिकी और संस्थाओं के परस्पर अंतर्संबंध में निहित है। मानव प्रौद्योगिकी द्वारा प्रकृति के साथ क्रिया करते हैं और अपने आर्थिक विकास की गति को तेज़ करने के लिए संस्थाओं का निर्माण करते हैं।

क्या आप भी अन्य बहुत से लोगों की तरह संसाधनों को प्राकृतिक उपहार समझते हैं? ऐसा नहीं है। संसाधन मानवीय क्रियाओं का परिणाम है। मानव स्वयं संसाधनों का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। वे पर्यावरण में पाए जाने वाले पदार्थों को संसाधनों में परिवर्तित करते हैं तथा उन्हें प्रयोग करते हैं। इन संसाधनों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

(क) उत्पत्ति के आधार पर – जैव और अजैव
(ख) समाप्यता के आधार पर – नवीकरण योग्य और अनवीकरण योग्य
(ग) स्वामित्व के आधार पर – व्यक्तिगत, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय
(घ) विकास के स्तर के आधार पर – संभावी, विकसित भंडार और संचित कोष

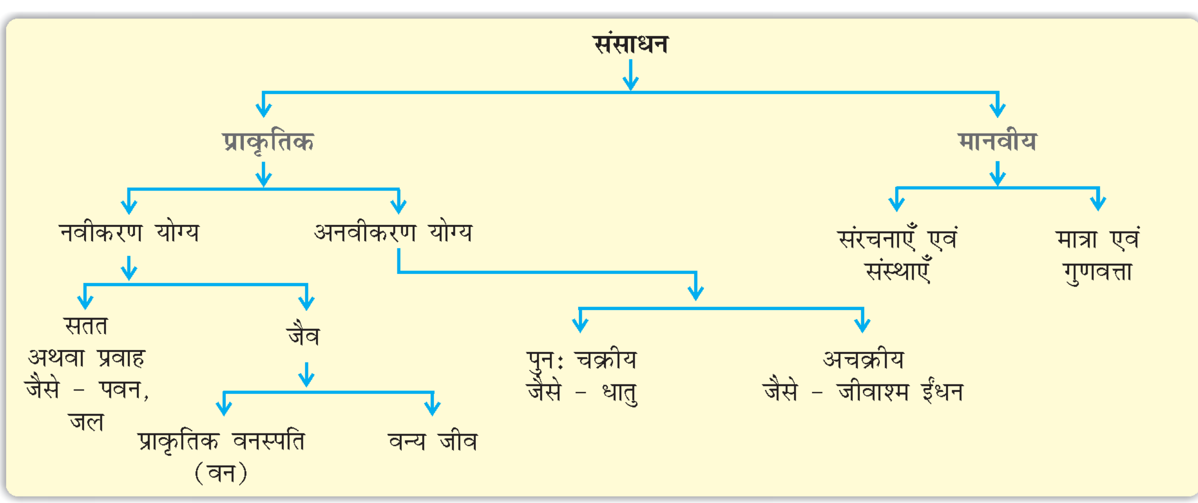

चित्र 1.2 – संसाधनों का वर्गीकरण

क्रियाकलाप

प्रत्येक संवर्ग से कम से कम दो संसाधनों की पहचान करें।

संसाधनों के प्रकार

उत्पत्ति के आधार पर

जैव संसाधन – इन संसाधनों की प्राप्ति जीवमंडल से होती है और इनमें जीवन व्याप्त है, जैसे – मनुष्य, वनस्पतिजात, प्राणिजात, मत्स्य जीवन, पशुधन आदि।

अजैव संसाधन – वे सारे संसाधन जो निर्जीव वस्तुओं से बने हैं, अजैव संसाधन कहलाते हैं। उदाहरणार्थ, चट्टानें और धातुएँ।

समाप्यता के आधार पर

नवीकरण योग्य संसाधन – वे संसाधन जिन्हें भौतिक, रासायनिक या यांत्रिक प्रक्रियाओं द्वारा नवीकृत या पुनः उत्पन्न किया जा सकता है, उन्हें नवीकरण योग्य अथवा पुनः पूर्ति योग्य संसाधन कहा जाता है। उदाहरणार्थ, सौर तथा पवन ऊर्जा, जल, वन व वन्य जीवन। इन संसाधनों को सतत् अथवा प्रवाह संसाधनों में विभाजित किया गया है (चित्र 1.2)।

अनवीकरण योग्य संसाधन – इन संसाधनों का विकास एक लंबे भू-वैज्ञानिक अंतराल में होता है। खनिज और जीवाश्म ईंधन इस प्रकार के संसाधनों के उदाहरण हैं। इनके बनने में लाखों वर्ष लग जाते हैं। इनमें से कुछ संसाधन जैसे धातुएँ पुनः चक्रीय हैं और कुछ संसाधन जैसे जीवाश्म ईंधन अचक्रीय हैं व एक बार के प्रयोग के साथ ही खत्म हो जाते हैं।

स्वामित्व के आधार पर

व्यक्तिगत संसाधन – संसाधन निजी व्यक्तियों के स्वामित्व में भी होते हैं। बहुत से किसानों के पास सरकार द्वारा आवंटित भूमि होती है जिसके बदले में वे सरकार को लगान चुकाते हैं। गाँव में बहुत से लोग भूमि के स्वामी भी होते हैं और बहुत से लोग भूमिहीन होते हैं। शहरों में लोग भूखंड, घरों व अन्य जायदाद के मालिक होते हैं। बाग, चारागाह, तालाब और कुओं का जल आदि संसाधनों के निजी स्वामित्व के कुछ उदाहरण हैं। अपने परिवार के संसाधनों की एक सूची तैयार कीजिए।

सामुदायिक स्वामित्व वाले संसाधन – ये संसाधन समुदाय के सभी सदस्यों को उपलब्ध होते हैं। गाँव की शामिलात भूमि (चारण भूमि, श्मशान भूमि, तालाब इत्यादि) और नगरीय क्षेत्रों के सार्वजनिक पार्क, पिकनिक स्थल और खेल के मैदान, वहाँ रहने वाले सभी लोगों के लिए उपलब्ध हैं।

राष्ट्रीय संसाधन – तकनीकी तौर पर देश में पाये जाने वाले सारे संसाधन राष्ट्रीय हैं। देश की सरकार को कानूनी अधिकार है कि वह व्यक्तिगत संसाधनों को भी आम जनता के हित में अधिग्रहित कर सकती है। आपने देखा होगा कि सड़कें, नहरें और रेल लाइनें व्यक्तिगत स्वामित्व वाले खेतों में बनी हुई हैं। शहरी विकास प्राधिकरणों को सरकार ने भूमि अधिग्रहण का अधिकार दिया हुआ है। सारे खनिज पदार्थ, जल संसाधन, वन, वन्य जीवन, राजनीतिक सीमाओं के अंदर सारी भूमि और 12 समुद्री मील (22.2 किमी.) तक महासागरीय क्षेत्र (भू-भागीय समुद्र) व इसमें पाए जाने वाले संसाधन राष्ट्र की संपदा हैं।

अंतर्राष्ट्रीय संसाधन – कुछ अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ संसाधनों को नियंत्रित करती हैं। तट रेखा से 200 समुद्री मील की दूरी (अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र) से परे खुले महासागरीय संसाधनों पर किसी देश का अधिकार नहीं है। इन संसाधनों को अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की सहमति के बिना उपयोग नहीं किया जा सकता।

क्या आप जानते हैं?

क्या आप जानते हैं कि भारत के पास अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र से दूर हिन्द महासागर की तलहटी से मैंगनीज़ ग्रंथियों का खनन करने का अधिकार है। कुछ अन्य अंतर्राष्ट्रीय संसाधनों की पहचान करें।

विकास के स्तर के आधार पर

संभावी संसाधन – यह वे संसाधन हैं जो किसी प्रदेश में विद्यमान होते हैं परंतु इनका उपयोग नहीं किया गया है। उदाहरण के तौर पर भारत के पश्चिमी भाग, विशेषकर राजस्थान और गुजरात में पवन और सौर ऊर्जा संसाधनों की अपार संभावना है, परंतु इनका सही ढंग से विकास नहीं हुआ है।

विकसित संसाधन – वे संसाधन जिनका सर्वेक्षण किया जा चुका है और उनके उपयोग की गुणवत्ता और मात्रा निर्धारित की जा चुकी है, विकसित संसाधन कहलाते हैं। संसाधनों का विकास प्रौद्योगिकी और उनकी संभाव्यता के स्तर पर निर्भर करता है।

भंडार – पर्यावरण में उपलब्ध वे पदार्थ जो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं परंतु उपयुक्त प्रौद्योगिकी के अभाव में उसकी पहुँच से बाहर हैं, भंडार में शामिल हैं। उदाहरण के लिए, जल दो ज्वलनशील गैसों, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का यौगिक है तथा यह ऊर्जा का मुख्य स्रोत बन सकता है। परंतु इस उद्देश्य से, इनका प्रयोग करने के लिए हमारे पास आवश्यक तकनीकी ज्ञान नहीं है।

संचित कोष – यह संसाधन भंडार का ही हिस्सा है, जिन्हें उपलब्ध तकनीकी ज्ञान की सहायता से प्रयोग में लाया जा सकता है, परंतु इनका उपयोग अभी आरंभ नहीं हुआ है। इनका उपयोग भविष्य में आवश्यकता पूर्ति के लिए किया जा सकता है। नदियों के जल को विद्युत पैदा करने में प्रयुक्त किया जा सकता है, परंतु वर्तमान समय में इसका उपयोग सीमित पैमाने पर ही हो रहा है। इस प्रकार बाँधों में जल, वन आदि संचित कोष हैं जिनका उपयोग भविष्य में किया जा सकता है।

क्रियाकलाप

अपने आसपास के क्षेत्र में पाए जाने वाले भंडार और संचित कोष संसाधनों की एक सूची तैयार कीजिए।

संसाधनों का विकास

संसाधन जिस प्रकार, मनुष्य के जीवन यापन के लिए अति आवश्यक हैं, उसी प्रकार जीवन की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए भी महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसा विश्वास किया जाता था कि संसाधन प्रकृति की देन है। परिणामस्वरूप, मानव ने इनका अंधाधुंध उपयोग किया है, जिससे निम्नलिखित मुख्य समस्याएँ पैदा हो गई हैं।

- कुछ व्यक्तियों के लालचवश संसाधनों का ह्रास
- संसाधन समाज के कुछ ही लोगों के हाथ में आ गए हैं, जिससे समाज दो हिस्सों संसाधन संपन्न एवं संसाधनहीन अर्थात् अमीर और गरीब में बँट गया।
- संसाधनों के अंधाधुंध शोषण से वैश्विक पारिस्थितिकी संकट पैदा हो गया है जैसे भूमंडलीय तापन, ओजोन परत अवक्षय, पर्यावरण प्रदूषण और भूमि निम्नीकरण आदि हैं।

क्रियाकलाप

1. कल्पना करें कि तेल संसाधन खत्म होने पर इनका हमारी जीवन शैली पर क्या प्रभाव होगा?
2. घरेलू और कृषि संबंधित अपशिष्ट को पुनः चक्रण करने के बारे में लोगों के विचार जानने के लिए अपने मोहल्ले अथवा गाँव में एक सर्वेक्षण करें। लोगों से प्रश्न पूछें कि–
   (अ) उनके द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले संसाधनों के बारे में वे क्या सोचते हैं?
   (ब) अपशिष्ट और उसके उपयोग के बारे में उनका क्या विचार है?
   (स) अपने परिणामों का समुच्चित चित्र (collage) तैयार करें।

मानव जीवन की गुणवत्ता और विश्व शांति बनाए रखने के लिए संसाधनों का समाज में न्यायसंगत बँटवारा आवश्यक हो गया है। यदि कुछ ही व्यक्तियों तथा देशों द्वारा संसाधनों का वर्तमान दोहन जारी रहता है, तो हमारी पृथ्वी का भविष्य खतरे में पड़ सकता है।

इसलिए, हर तरह के जीवन का अस्तित्व बनाए रखने के लिए संसाधनों के उपयोग की योजना बनाना अति आवश्यक है। सतत् अस्तित्व सही अर्थ में सतत् पोषणीय विकास का ही एक हिस्सा है।

सतत् पोषणीय विकास

सतत् पोषणीय आर्थिक विकास का अर्थ है कि विकास पर्यावरण को बिना नुकसान पहुँचाए हो और वर्तमान विकास की प्रक्रिया भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकता की अवहेलना न करे।

रियो डी जेनेरो पृथ्वी सम्मेलन, 1992

जून, 1992 में 100 से भी अधिक राष्ट्राध्यक्ष ब्राजील के शहर रियो डी जेनेरो में प्रथम अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी सम्मेलन में एकत्रित हुए। सम्मेलन का आयोजन विश्व स्तर पर उभरते पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक-आर्थिक विकास की समस्याओं का हल ढूँढ़ने के लिए किया गया था। इस

सम्मेलन में एकत्रित नेताओं ने भूमंडलीय जलवायु परिवर्तन और जैविक विविधता पर एक घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किया। रियो सम्मेलन में भूमंडलीय वन सिद्धांतों (Forest Principles) पर सहमति जताई और 21वीं शताब्दी में सतत् पोषणीय विकास के लिए एजेंडा 21 को स्वीकृति प्रदान की।

एजेंडा 21

यह एक घोषणा है जिसे 1992 में ब्राजील के शहर रियो डी जेनेरो में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास सम्मेलन (UNCED) के तत्त्वाधान में राष्ट्राध्यक्षों द्वारा स्वीकृत किया गया था। इसका उद्देश्य भूमंडलीय सतत् पोषणीय विकास हासिल करना है। यह एक कार्यसूची है जिसका उद्देश्य समान हितों, पारस्परिक आवश्यकताओं एवं सम्मिलित जिम्मेदारियों के अनुसार विश्व सहयोग के द्वारा पर्यावरणीय क्षति, गरीबी और रोगों से निपटना है। एजेंडा 21 का मुख्य उद्देश्य यह है कि प्रत्येक स्थानीय निकाय अपना स्थानीय एजेंडा 21 तैयार करे।

संसाधन नियोजन

संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के लिए नियोजन एक सर्वमान्य रणनीति है। इसलिए भारत जैसे देश में जहाँ संसाधनों की उपलब्धता में बहुत अधिक विविधता है, यह और भी महत्त्वपूर्ण है। यहाँ ऐसे प्रदेश भी हैं जहाँ एक तरह के संसाधनों की प्रचुरता है, परंतु दूसरे तरह के संसाधनों की कमी है। कुछ ऐसे प्रदेश भी हैं जो संसाधनों की उपलब्धता के संदर्भ में आत्मनिर्भर हैं और कुछ ऐसे भी प्रदेश हैं जहाँ महत्त्वपूर्ण संसाधनों की अत्यधिक कमी है। उदाहरणार्थ, झारखंड, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ आदि प्रांतों में खनिजों और कोयले के प्रचुर भंडार हैं। अरुणाचल प्रदेश में जल संसाधन प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, परंतु मूल विकास की कमी है। राजस्थान में पवन और सौर ऊर्जा संसाधनों की बहुतायत है, लेकिन जल संसाधनों की कमी है। लद्दाख का शीत मरुस्थल देश के अन्य भागों से अलग-थलग पड़ता है। यह प्रदेश सांस्कृतिक विरासत का धनी है परंतु यहाँ जल, आधारभूत अवसंरचना तथा कुछ महत्त्वपूर्ण खनिजों की कमी है। इसलिए राष्ट्रीय, प्रांतीय, प्रादेशिक और स्थानीय स्तर पर संतुलित संसाधन नियोजन की आवश्यकता है।

क्रियाकलाप

अपने राज्य में पाए जाने वाले संसाधनों की सूची तैयार करें और जिन महत्त्वपूर्ण संसाधनों की आपके राज्य में कमी है, उनकी पहचान करें।

भारत में संसाधन नियोजन

संसाधन नियोजन एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें निम्नलिखित सोपान हैं – (क) देश के विभिन्न प्रदेशों में संसाधनों की पहचान कर उनकी तालिका बनाना। इस कार्य में क्षेत्रीय सर्वेक्षण, मानचित्र बनाना और संसाधनों का गुणात्मक एवं मात्रात्मक अनुमान लगाना व मापन करना है। (ख) संसाधन विकास योजनाएँ लागू करने के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी, कौशल और संस्थागत नियोजन ढाँचा तैयार करना। (ग) संसाधन विकास योजनाओं और राष्ट्रीय विकास योजना में समन्वय स्थापित करना।

स्वाधीनता के बाद भारत में संसाधन नियोजन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही प्रयास किए गए।

ज्ञात करो

समुदाय भागीदारी की सहायता से समुदाय / ग्राम पंचायत / वार्ड स्तरीय समुदायों द्वारा आपके आसपास के क्षेत्र में कौन से संसाधन विकसित किए जा रहे हैं?

किसी क्षेत्र के विकास के लिए संसाधनों की उपलब्धता एक आवश्यक शर्त है। परंतु प्रौद्योगिकी और संस्थाओं में तदनरूपी परिवर्तनों के अभाव में मात्र संसाधनों की उपलब्धता से ही विकास संभव नहीं है। देश में बहुत से क्षेत्र हैं जो संसाधन समृद्ध होते हुए भी आर्थिक रूप से पिछड़े प्रदेशों की गिनती में आते हैं। इसके विपरीत कुछ ऐसे प्रदेश भी हैं जो संसाधनों की कमी होते हुए भी आर्थिक रूप से विकसित हैं।

क्या आप संसाधन संपन्न परंतु आर्थिक रूप से पिछड़े और संसाधन विहीन परंतु आर्थिक रूप से विकसित प्रदेशों के नाम बता सकते हैं? ऐसी परिस्थिति होने के कारण बताएँ।

उपनिवेशन का इतिहास हमें बताता है कि उपनिवेशों में संसाधन संपन्न प्रदेश, विदेशी आक्रमणकारियों के

लिए मुख्य आकर्षण रहे हैं। उपनिवेशकारी देशों ने बेहतर प्रौद्योगिकी के सहारे उपनिवेशों के संसाधनों का शोषण किया तथा उन पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। अत: संसाधन किसी प्रदेश के विकास में तभी योगदान दे सकते हैं, जब वहाँ उपयुक्त प्रौद्योगिकी विकास और संस्थागत परिवर्तन किए जाएँ। उपनिवेशन के विभिन्न चरणों में भारत ने इन सबका अनुभव किया है। अत: भारत में विकास सामान्यत: तथा संसाधन विकास लोगों के मुख्यत: संसाधनों की उपलब्धता पर ही आधारित नहीं था बल्कि इसमें प्रौद्योगिकी, मानव संसाधन की गुणवत्ता और ऐतिहासिक अनुभव का भी योगदान रहा है।

संसाधनों का संरक्षण – संसाधन किसी भी तरह के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। परंतु संसाधनों का विवेकहीन उपभोग और अति उपयोग के कारण कई सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय समस्याएँ पैदा हो सकती हैं। इन समस्याओं से बचाव के लिए विभिन्न स्तरों पर संसाधनों का संरक्षण आवश्यक है। भूतकाल से ही संसाधनों का संरक्षण बहुत से नेताओं और चिंतकों के लिए चिंता का विषय रहा है। उदाहरणार्थ, गांधी जी ने संसाधनों के संरक्षण पर अपनी चिंता इन शब्दों में व्यक्त की है - **हमारे पास हर व्यक्ति की आवश्यकता पूर्ति के लिए बहुत कुछ है, लेकिन किसी के लालच की संतुष्टि के लिए नहीं। अर्थात् हमारे पास पेट भरने के लिए बहुत है लेकिन पेटी भरने के लिए नहीं।** उनके अनुसार विश्व स्तर पर संसाधन ह्रास के लिए लालची और स्वार्थी व्यक्ति तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी की शोषणात्मक प्रवृत्ति जिम्मेदार है। वे अत्यधिक उत्पादन के विरुद्ध थे और इसके स्थान पर अधिक बड़े जनसमुदाय द्वारा उत्पादन के पक्षधर थे।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यवस्थित तरीके से संसाधन संरक्षण की वकालत 1968 में ***क्लब ऑफ रोम*** ने की। तत्पश्चात् 1974 में शुमेसर ने अपनी पुस्तक ***स्माल इज ब्यूटीफुल*** में इस विषय पर गांधी जी के दर्शन की एक बार फिर से पुनरावृत्ति की है। 1987 में ब्रुन्ड्टलैंड आयोग रिपोर्ट द्वारा वैश्विक स्तर पर संसाधन संरक्षण में मूलाधार योगदान किया गया। इस रिपोर्ट ने सतत् पोषणीय विकास (Sustainable Development) की संकल्पना प्रस्तुत की और संसाधन संरक्षण की वकालत की। यह रिपोर्ट बाद में ***हमारा सांझा भविष्य (Our Common Future)*** शीर्षक से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुई। इस संदर्भ में एक और महत्त्वपूर्ण योगदान रियो डी जेनेरो, ब्राजील में 1992 में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन द्वारा किया गया।

भू-संसाधन

हम भूमि पर रहते हैं, इसी पर अनेकों आर्थिक क्रियाकलाप करते हैं और विभिन्न रूपों में इसका उपयोग करते हैं। अत: भूमि एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। प्राकृतिक वनस्पति, वन्य जीवन, मानव जीवन, आर्थिक क्रियाएँ, परिवहन तथा संचार व्यवस्थाएँ भूमि पर ही आधारित हैं। परंतु भूमि एक सीमित संसाधन है, इसलिए उपलब्ध भूमि का विभिन्न उद्देश्यों के लिए उपयोग सावधानी और योजनाबद्ध तरीके से होना चाहिए।

भारत में भूमि पर विभिन्न प्रकार की भू-आकृतियाँ जैसे पर्वत, पठार, मैदान और द्वीप पाए जाते हैं। लगभग 43 प्रतिशत भू-क्षेत्र मैदान हैं जो कृषि और उद्योग के विकास के लिए सुविधाजनक हैं। पर्वत पूरे भू-क्षेत्र के 30 प्रतिशत भाग पर विस्तृत हैं। वे कुछ बारहमासी नदियों के प्रवाह को सुनिश्चित करते है, पर्यटन विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान करता है और पारिस्थितिकी के लिए महत्त्वपूर्ण है। देश के क्षेत्रफल का लगभग 27 प्रतिशत हिस्सा पठारी क्षेत्र है। इस क्षेत्र में खनिजों, जीवाश्म ईंधन और वनों का अपार संचय कोष है।

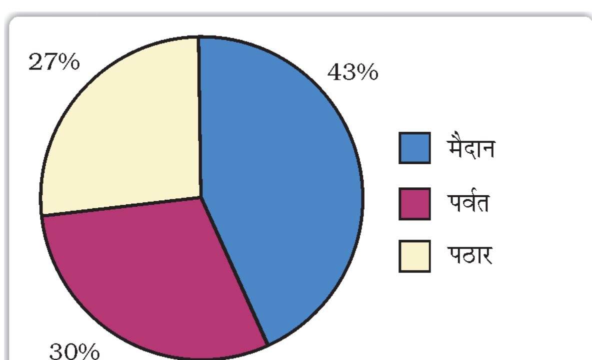

चित्र 1.3 – मुख्य भू आकृतियों के अंतर्गत क्षेत्र

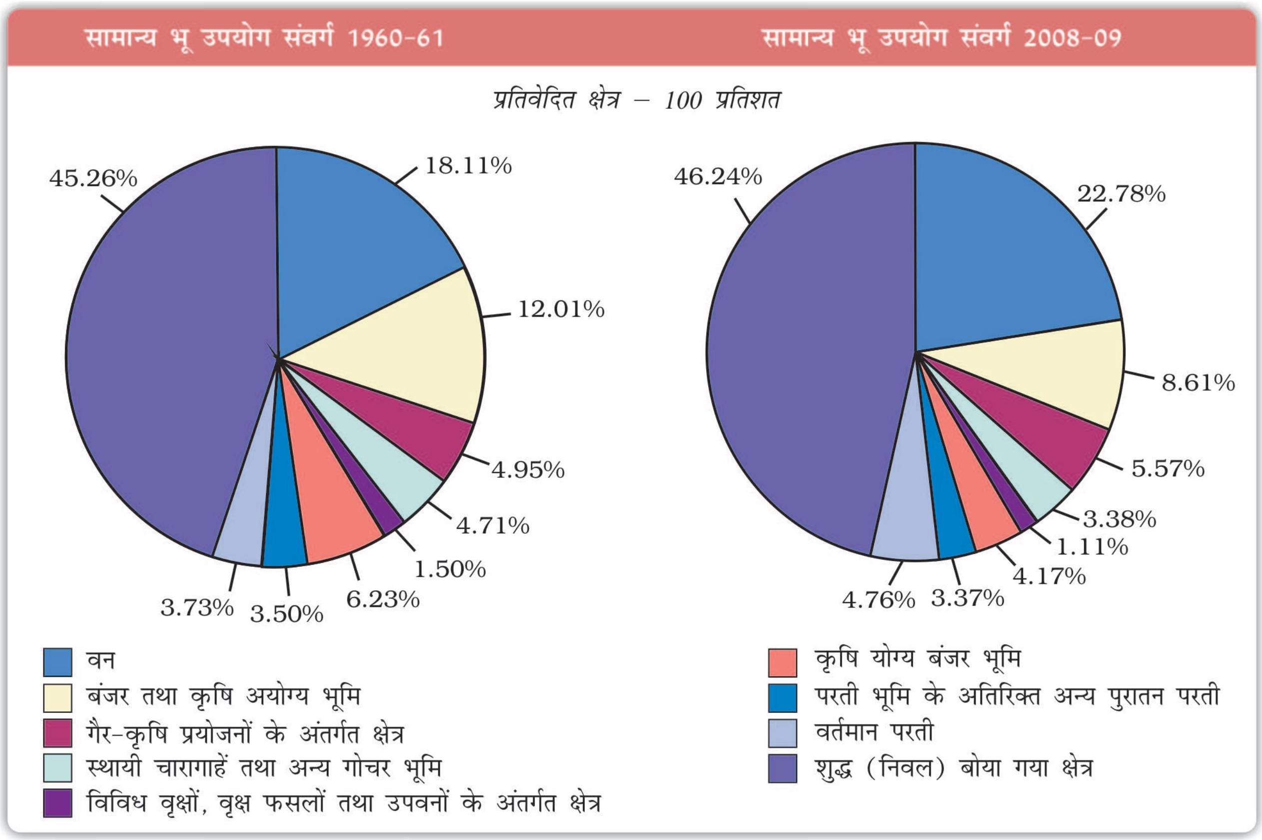

चित्र 1.4

भू-उपयोग

भू-संसाधनों का उपयोग निम्नलिखित उद्देश्यों से किया जाता है–

1. वन
2. कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि
   (अ) बंजर तथा कृषि अयोग्य भूमि
   (ब) गैर-कृषि प्रयोजनों में लगाई गई भूमि – जैसे इमारतें, सड़क, उद्योग इत्यादि।
3. परती भूमि के अतिरिक्त अन्य कृषि अयोग्य भूमि
   (अ) स्थायी चरागाहें तथा अन्य गोचर भूमि
   (ब) विविध वृक्षों, वृक्ष फसलों, तथा उपवनों के अधीन भूमि (जो शुद्ध बोए गए क्षेत्र में शामिल नहीं है)
   (स) कृषि योग्य बंजर भूमि जहाँ पाँच से अधिक वर्षों से खेती न की गई हो।
4. परती भूमि
   (अ) वर्तमान परती (जहाँ एक कृषि वर्ष या उससे कम समय से खेती न की गई हो)
   (ब) वर्तमान परती भूमि के अतिरिक्त अन्य परती भूमि या पुरातन परती (जहाँ 1 से 5 कृषि वर्ष से खेती न की गई हो)
5. शुद्ध (निवल) बोया गया क्षेत्र

   एक कृषि वर्ष में एक बार से अधिक बोए गए क्षेत्र को शुद्ध (निवल) बोए गए क्षेत्र में जोड़ दिया जाए तो वह सकल कृषित क्षेत्र कहलाता है।

भारत में भू-उपयोग प्रारूप

भू-उपयोग को निर्धारित करने वाले तत्त्वों में भौतिक कारक जैसे भू-आकृति, जलवायु और मृदा के प्रकार तथा मानवीय कारक जैसे जनसंख्या घनत्व, प्रौद्योगिक क्षमता, संस्कृति और परंपराएँ इत्यादि शामिल हैं।

भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32.8 लाख वर्ग किमी. है। परंतु इसके 93 प्रतिशत भाग के ही भू-उपयोग आँकड़े उपलब्ध हैं क्योंकि पूर्वोत्तर प्रांतों में असम को छोड़कर अन्य प्रांतों के सूचित क्षेत्र के बारे में जानकारी

उपलब्ध नहीं है। इसके अलावा जम्मू और कश्मीर में पाकिस्तान और चीन अधिकृत क्षेत्रों के भूमि उपयोग का सर्वेक्षण भी नहीं हुआ है।

क्रियाकलाप

भू-उपयोग के दो वृत्त चित्रों 1.4 की तुलना करके पता लगाएँ कि 1960-61 और 2008-09 के बीच शुद्ध (निवल) बोये गये क्षेत्र और वनों के अंतर्गत भूमि में बहुत सीमित परिवर्तन ही क्यों आया है?

स्थायी चरागाहों के अंतर्गत भी भूमि कम हुई है। पशुधन की इतनी बड़ी संख्या के लिए चारा उपलब्ध कराने में कैसे समर्थ होंगे? और इसके क्या परिणाम होंगे? वर्तमान परती भूमि के अतिरिक्त अन्य परती भूमि अनुपजाऊ हैं और इन पर फसलें उगाने के लिए कृषि लागत बहुत ज्यादा है। अतः इस भूमि में दो या तीन वर्षों में इनको एक या दो बार बोया जाता है और यदि इसे शुद्ध (निवल) बोये गए क्षेत्र में शामिल कर लिया जाता है तब भी भारत के कुल सूचित क्षेत्र के लगभग 54 प्रतिशत हिस्से पर ही खेती हो सकती है।

शुद्ध (निवल) बोये गए क्षेत्र का प्रतिशत भी विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है। पंजाब और हरियाणा में 80 प्रतिशत भूमि पर खेती होती है, परंतु अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर और अंडमान निकोबार द्वीप समूह में 10 प्रतिशत से भी कम क्षेत्र बोया जाता है।

इन राज्यों में शुद्ध (निवल) बोये गए क्षेत्र के कम अनुपात के लिए उत्तरदायी कारणों को ज्ञात कीजिए।

हमारे देश में राष्ट्रीय वन नीति (1952) द्वारा निर्धारित वनों के अंतर्गत 33 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र वांछित हैं। जिसकी तुलना में वन के अंतर्गत क्षेत्र काफी कम है। वन नीति द्वारा निर्धारित यह सीमा पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक है। वन क्षेत्रों के आस पास रहने वाले लाखों लोगों की आजीविका इस पर निर्भर करती है। भू-उपयोग का एक भाग बंजर भूमि और दूसरा गैर-कृषि प्रयोजनों में लगाई गई भूमि कहलाता है। बंजर भूमि में पहाड़ी चट्टानें, सूखी और मरुस्थलीय भूमि शामिल हैं। गैर-कृषि प्रयोजनों में लगाई भूमि में बस्तियाँ, सड़कें, रेल लाइन, उद्योग इत्यादि आते हैं। लंबे समय तक लगातार भूमि संरक्षण और प्रबंधन की अवहेलना करने एवं लगातार भू-उपयोग के कारण भू-संसाधनों का निम्नीकरण हो रहा है। इसके कारण समाज और पर्यावरण पर गंभीर आपदा आ सकती है।

भूमि निम्नीकरण और संरक्षण उपाय

भूमि एक ऐसा संसाधन है जिसका उपयोग हमारे पूर्वज करते आए हैं तथा भावी पीढ़ी भी इसी भूमि का उपयोग करेगी। हम भोजन, मकान और कपड़े की अपनी मूल आवश्यकताओं का 95 प्रतिशत भाग भूमि से प्राप्त करते हैं। मानव कार्यकलापों के कारण न केवल भूमि का निम्नीकरण हो रहा है बल्कि भूमि को नुकसान पहुँचाने वाली प्राकृतिक ताकतों को भी बल मिला है।

इस समय भारत में लगभग 13 करोड़ हेक्टेयर भूमि निम्नीकृत है। इसमें से लगभग 28 प्रतिशत भूमि निम्नीकृत वनों के अंतर्गत है, 56 प्रतिशत क्षेत्र जल अपरदित है और शेष क्षेत्र लवणीय और क्षारीय है। कुछ मानव क्रियाओं जैसे वनोन्मूलन, अति पशुचारण, खनन ने भी भूमि के निम्नीकरण में मुख्य भूमिका निभाई है।

भारत – बंजर भूमि, 2000

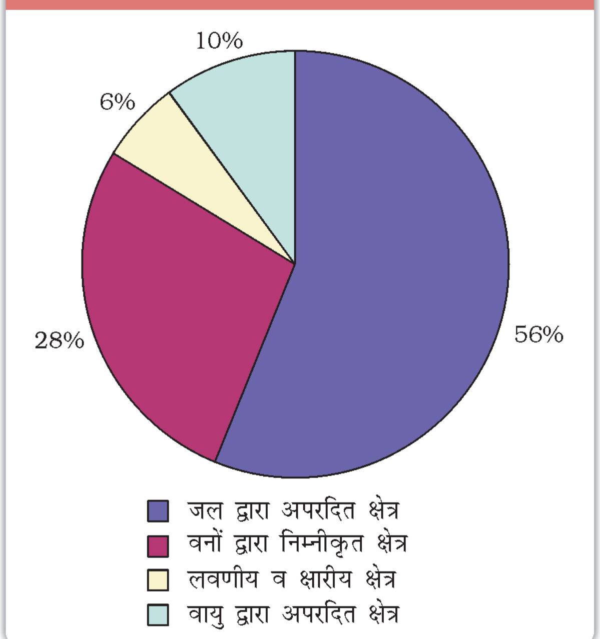

चित्र 1.5

खनन के उपरांत खदानों वाले स्थानों को गहरी खाइयों और मलबे के साथ खुला छोड़ दिया जाता है। खनन के कारण झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और उड़ीसा जैसे राज्यों में वनोन्मूलन भूमि निम्नीकरण का कारण बना है। गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र में अति पशुचारण भूमि निम्नीकरण का मुख्य कारण है। पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में अधिक सिंचाई भूमि निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी है। अति सिंचन से उत्पन्न जलाक्रांतता भी भूमि निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी है जिससे मृदा में लवणीयता और क्षारीयता बढ़ जाती है। खनिज प्रक्रियाएँ जैसे सीमेंट उद्योग में चूना पत्थर को पीसना और मृदा बर्तन उद्योग में चूने (खड़िया मृदा) और सेलखड़ी के प्रयोग से बहुत अधिक मात्रा में वायुमंडल में धूल विसर्जित होती है। जब इसकी परत भूमि पर जम जाती है तो मृदा की जल सोखने की प्रक्रिया अवरुद्ध हो जाती है। पिछले कुछ वर्षों से देश के विभिन्न भागों में औद्योगिक जल निकास से बाहर आने वाला अपशिष्ट पदार्थ भूमि और जल प्रदूषण का मुख्य स्रोत है।

भूमि निम्नीकरण की समस्याओं को सुलझाने के कई तरीके हैं। वनारोपण और चरागाहों का उचित प्रबंधन इसमें कुछ हद तक मदद कर सकते हैं। पेड़ों की रक्षक मेखला (shelter belt), पशुचारण नियंत्रण और रेतीले टीलों को काँटेदार झाड़ियाँ लगाकर स्थिर बनाने की प्रक्रिया से भी भूमि कटाव की रोकथाम की जा सकती है। बंजर भूमि के उचित प्रबंधन, खनन नियंत्रण और औद्योगिक जल को परिष्करण के पश्चात् विसर्जित करके जल और भूमि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

मृदा संसाधन

मिट्टी अथवा मृदा सबसे महत्त्वपूर्ण नवीकरण योग्य प्राकृतिक संसाधन है। यह पौधों के विकास का माध्यम है जो पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के जीवों का पोषण करती है। मृदा एक जीवंत तंत्र है। कुछ सेंटीमीटर गहरी मृदा बनने में लाखों वर्ष लग जाते हैं। मृदा बनने की प्रक्रिया में उच्चावच, जनक शैल अथवा संस्तर शैल, जलवायु, वनस्पति और अन्य जैव पदार्थ और समय मुख्य कारक हैं। प्रकृति के अनेकों तत्त्व जैसे तापमान परिवर्तन, बहते

चित्र 1.6 – मृदा परिच्छेदिका

जल की क्रिया, पवन, हिमनदी और अपघटन क्रियाएँ आदि मृदा बनने की प्रक्रिया में योगदान देती हैं। मृदा में होने वाले रासायनिक और जैविक परिवर्तन भी महत्त्वपूर्ण हैं। मृदा जैव (ह्यूमस) और अजैव दोनों प्रकार के पदार्थों से बनती है। (चित्र 1.6)

मृदा बनने की प्रक्रिया को निर्धारित करने वाले तत्त्वों, उनके रंग, गहराई, गठन, आयु, व रासायनिक और भौतिक गुणों के आधार पर भारत की मृदाओं को निम्नलिखित प्रकारों में बाँटा जा सकता है।

मृदाओं का वर्गीकरण

भारत में अनेक प्रकार के उच्चावच, भू-आकृतियाँ, जलवायु और वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। इस कारण अनेक प्रकार की मृदाएँ विकसित हुई हैं।

जलोढ़ मृदा

यह मृदा विस्तृत रूप से फैली हुई है और यह देश की महत्त्वपूर्ण मृदा है। वास्तव में संपूर्ण उत्तरी मैदान जलोढ़ मृदा से बना है। यह मृदाएँ हिमालय की तीन महत्त्वपूर्ण नदी तंत्रों सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों द्वारा लाए गए

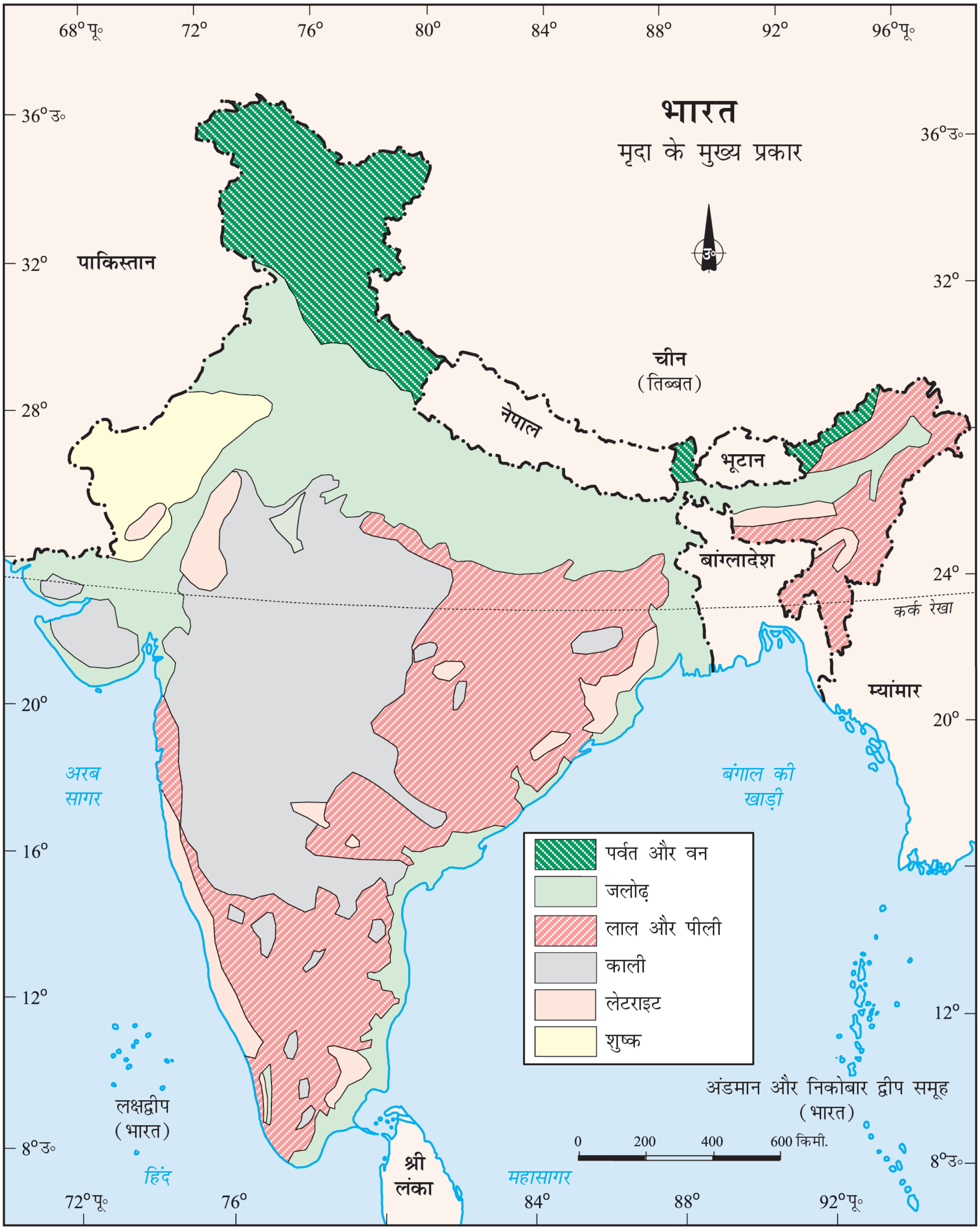

भारत – मृदा के मुख्य प्रकार

निक्षेपों से बनी हैं। एक सँकरे गलियारे के द्वारा ये मृदाएँ राजस्थान और गुजरात तक फैली हैं। पूर्वी तटीय मैदान, विशेषकर महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों के डेल्टे भी जलोढ़ मृदा से बने हैं।

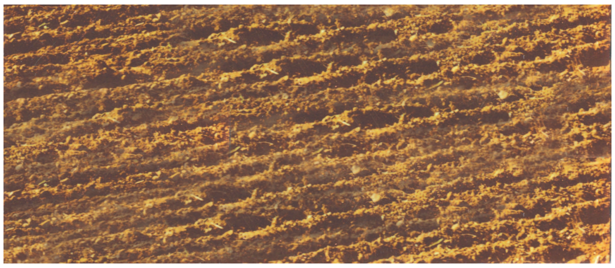

चित्र 1.7 – जलोढ़ मृदा

जलोढ़ मृदा में रेत, सिल्ट और मृत्तिका के विभिन्न अनुपात पाए जाते हैं। जैसे हम नदी के मुहाने से घाटी में ऊपर की ओर जाते हैं मृदा के कणों का आकार बढ़ता चला जाता है। नदी घाटी के ऊपरी भाग में, जैसे ढाल भंग के समीप मोटे कण वाली मृदाएँ पाई जाती हैं। ऐसी मृदाएँ पर्वतों की तलहटी पर बने मैदानों जैसे द्वार, 'चो' क्षेत्र और तराई में आमतौर पर पाई जाती हैं।

कणों के आकार या घटकों के अलावा मृदाओं की पहचान उनकी आयु से भी होती है। आयु के आधार पर जलोढ़ मृदाएँ दो प्रकार की हैं – पुराना जलोढ़ (**बांगर**) और नया जलोढ़ (**खादर**)। बांगर मृदा में 'कंकर' ग्रंथियों की मात्रा ज्यादा होती है। खादर मृदा में बांगर मृदा की तुलना में ज़्यादा महीन कण पाए जाते हैं।

जलोढ़ मृदाएँ बहुत उपजाऊ होती हैं। अधिकतर जलोढ़ मृदाएँ पोटाश, फास्फोरस और चूनायुक्त होती हैं जो इनको गन्ने, चावल, गेहूँ और अन्य अनाजों और दलहन फसलों की खेती के लिए उपयुक्त बनाती है। अधिक उपजाऊपन के कारण जलोढ़ मृदा वाले क्षेत्रों में गहन कृषि की जाती है और यहाँ जनसंख्या घनत्व भी अधिक है। सूखे क्षेत्रों की मृदाएँ अधिक क्षारीय होती हैं। इन मृदाओं का सही उपचार और सिंचाई करके इनकी पैदावार बढ़ाई जा सकती है।

काली मृदा

इन मृदाओं का रंग काला है और इन्हे **'रेगर'** मृदाएँ भी कहा जाता है। काली मृदा कपास की खेती के लिए उचित समझी जाती है और **काली कपास मृदा** के नाम से भी जाना जाता है। यह माना जाता है कि जलवायु और जनक शैलों ने काली मृदा के बनने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इस प्रकार की मृदाएँ दक्कन पठार (बेसाल्ट) क्षेत्र के उत्तर पश्चिमी भागों में पाई जाती हैं और लावा जनक शैलों से बनी है। ये मृदाएँ महाराष्ट्र, सौराष्ट्र, मालवा, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के पठार पर पाई जाती हैं और दक्षिण पूर्वी दिशा में गोदावरी और कृष्णा नदियों की घाटियों तक फैली हैं।

चित्र 1.8 – काली मृदा

काली मृदा बहुत महीन कणों अर्थात् मृत्तिका से बनी है। इसकी नमी धारण करने की क्षमता बहुत होती है। इसके अलावा ये मृदाएँ कैल्शियम कार्बोनेट, मैगनीशियम, पोटाश और चूने जैसे पौष्टिक तत्त्वों से परिपूर्ण होती हैं। परंतु इनमें फास्फोरस की मात्रा कम होती है। गर्म और शुष्क मौसम में इन मृदाओं में गहरी दरारें पड़ जाती हैं जिससे इनमें अच्छी तरह वायु मिश्रण हो जाता है। गीली होने पर ये मृदाएँ चिपचिपी हो जाती है और इन को जोतना मुश्किल होता है। इसलिए, इसकी जुताई मानसून प्रारंभ होने की पहली बौछार से ही शुरू कर दी जाती है।

लाल और पीली मृदा

लाल मृदा दक्कन पठार के पूर्वी और दक्षिणी हिस्सों में रवेदार आग्नेय चट्टानों पर कम वर्षा वाले भागों में विकसित हुई है। लाल और पीली मृदाएँ ओडिशा, छत्तीसगढ़, मध्य गंगा मैदान के दक्षिणी छोर पर और

पश्चिमी घाट में पहाड़ी पद पर पाई जाती है। इन मृदाओं का लाल रंग रवेदार आग्नेय और रूपांतरित चट्टानों में लौह धातु के प्रसार के कारण होता है। इनका पीला रंग इनमें जलयोजन के कारण होता है।

लेटराइट मृदा

लेटराइट शब्द ग्रीक भाषा के शब्द लेटर (Later) से लिया गया है जिसका अर्थ है ईंट। लेटराइट मृदा उच्च तापमान और अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में विकसित होती है। यह भारी वर्षा से अत्यधिक निक्षालन (leaching) का परिणाम है। इस मृदा में ह्यूमस की मात्रा कम पाई जाती है क्योंकि अत्यधिक तापमान के कारण जैविक पदार्थों को अपघटित करने वाले बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। लेटराइट मृदा पर अधिक मात्रा में खाद और रासायनिक

चित्र 1.9 – लेटराइट मृदा

उर्वरक डाल कर ही खेती की जा सकती है। ये मृदाएँ मुख्य तौर पर कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश और ओडिशा तथा असम के पहाड़ी क्षेत्र में पाई जाती है। मृदा संरक्षण की उचित तकनीक अपना कर इन मृदाओं पर कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु में चाय और कॉफी उगाई जाती हैं। तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और केरल की लाल लेटराइट मृदाएँ काजू की फसल के लिए अधिक उपयुक्त हैं।

मरुस्थली मृदा

मरुस्थली मृदाओं का रंग लाल और भूरा होता है। ये मृदाएँ आम तौर पर रेतीली और लवणीय होती हैं। कुछ क्षेत्रों में नमक की मात्रा इतनी अधिक है कि झीलों से जल वाष्पीकृत करके खाने का नमक भी बनाया जाता है। शुष्क जलवायु और उच्च तापमान के कारण जलवाष्पन दर अधिक है और मृदाओं में ह्यूमस और नमी की मात्रा कम होती है। मृदा की सतह के नीचे कैल्शियम की मात्रा बढ़ती चली जाती है और नीचे की परतों में चूने के कंकर की सतह पाई जाती है। इसके कारण मृदा में जल अंतः स्यंदन (infiltration) अवरुद्ध हो जाता है। इस मृदा को सही तरीके से सिंचित करके कृषि योग्य बनाया जा सकता है, जैसा कि पश्चिमी राजस्थान में हो रहा है।

चित्र 1.10 – मरुस्थली मृदा

वन मृदा

ये मृदाएँ आमतौर पर पहाड़ी और पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाती हैं जहाँ पर्याप्त वर्षा-वन उपलब्ध हैं। इन मृदाओं के गठन में पर्वतीय पर्यावरण के अनुसार बदलाव आता है। नदी घाटियों में ये मृदाएँ दोमट और सिल्टदार होती है परंतु ऊपरी ढालों पर इनका गठन मोटे कणों का होता है। हिमालय के हिमाच्छादित क्षेत्रों में इन मृदाओं का बहुत अपरदन होता है और ये अधिसिलिक (acidic) तथा ह्यूमस रहित होती हैं। नदी घाटियों के निचले क्षेत्रों, विशेषकर नदी सोपानों और जलोढ़ पंखों, आदि में ये मृदाएँ उपजाऊ होती हैं।

मृदा अपरदन और संरक्षण

मृदा के कटाव और उसके बहाव की प्रक्रिया को मृदा अपरदन कहा जाता है। मृदा के बनने और अपरदन की

क्रियाएँ आमतौर पर साथ-साथ चलती है और दोनों में संतुलन होता है। परंतु मानवीय क्रियाओं जैसे वनोन्मूलन, अति पशुचारण, निर्माण और खनन इत्यादि से कई बार

चित्र 1.11 – मृदा अपरदन

यह संतुलन भंग हो जाता है तथा प्राकृतिक तत्त्व जैसे पवन, हिमनदी और जल मृदा अपरदन करते हैं। बहता जल मृत्तिकायुक्त मृदाओं को काटते हुए गहरी वाहिकाएँ बनाता है, जिन्हे अवनलिकाएँ कहते हैं। ऐसी भूमि जोतने योग्य नहीं रहती और इसे **उत्खात भूमि** (bad land) कहते हैं। चंबल बेसिन में ऐसी भूमि को खड्ड (ravine) भूमि कहा जाता है। कई बार जल विस्तृत क्षेत्र को ढके हुए ढाल के साथ नीचे की ओर बहता है। ऐसी स्थिति में इस क्षेत्र की ऊपरी मृदा घुलकर जल के साथ बह जाती है। इसे चादर अपरदन (Sheet erosion) कहा जाता है। पवन द्वारा मैदान अथवा ढालू क्षेत्र से मृदा को उड़ा ले जाने की प्रक्रिया को पवन अपरदन कहा जाता है। कृषि के गलत तरीकों से भी मृदा अपरदन होता है। गलत ढंग से हल चलाने जैसे

चित्र 1.12 – अवनालिका अपरदन

ढाल पर ऊपर से नीचे की ओर हल चलाने से वाहिकाएँ बन जाती हैं, जिसके अंदर से बहता पानी आसानी से मृदा का कटाव करता है।

ढाल वाली भूमि पर समोच्च रेखाओं के समानांतर हल चलाने से ढाल के साथ जल बहाव की गति घटती है। इसे समोच्च जुताई (contour ploughing) कहा जाता है। ढाल वाली भूमि पर सोपान बनाए जा सकते हैं। सोपान कृषि अपरदन को नियंत्रित करती है। पश्चिमी और मध्य हिमालय में सोपान अथवा सीढ़ीदार कृषि काफी विकसित है। बड़े खेतों को पट्टियों में बाँटा जाता है। फसलों के बीच में घास की पट्टियाँ उगाई जाती हैं। ये पवनों द्वारा जनित बल को कमजोर करती हैं। इस तरीके को पट्टी कृषि (strip farming) कहते हैं। पेड़ों को कतारों में लगाकर रक्षक (shelter belt) मेखला बनाना भी पवनों की गति कम करता है। इन रक्षक पट्टियों का पश्चिम भारत में रेत के टीलों के स्थायीकरण में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

भारत के पर्यावरण की दशा

- सुखोमाजरी गाँव और झबुआ जिले ने यह कर दिखाया है कि भूमि निम्नीकरण प्रक्रिया को पलटा जा सकता है। सुखोमाजरी में वृक्ष घनत्व 1976 में 13 प्रति हेक्टेयर था जो कि 1992 में बढ़कर 1272 प्रति हेक्टेयर हो गया।
- पर्यावरण के पुनर्जनन से अधिक संसाधन उपलब्धता, कृषि और पशुपालन में सुधार के परिणामस्वरूप आमदनी बढ़ती है और समाज में आर्थिक समृद्धि आती है। सुखोमाजरी में 1979 से 1984 के बीच परिवारों की औसत वार्षिक आमदनी 10,000 से 15,000 रुपये थी।

- पर्यावरण की पुनर्स्थापना के लिए लोगों द्वारा इसका प्रबंधन आवश्यक है। मध्य प्रदेश सरकार ने लोगों को स्वयं फैसला लेने का अधिकार दिया है और वे प्रदेश की 29 लाख हेक्टेयर भूमि भारत का लगभग एक प्रतिशत क्षेत्रफल को जल विभाजक प्रबंधन द्वारा हरा-भरा बना रहे हैं।

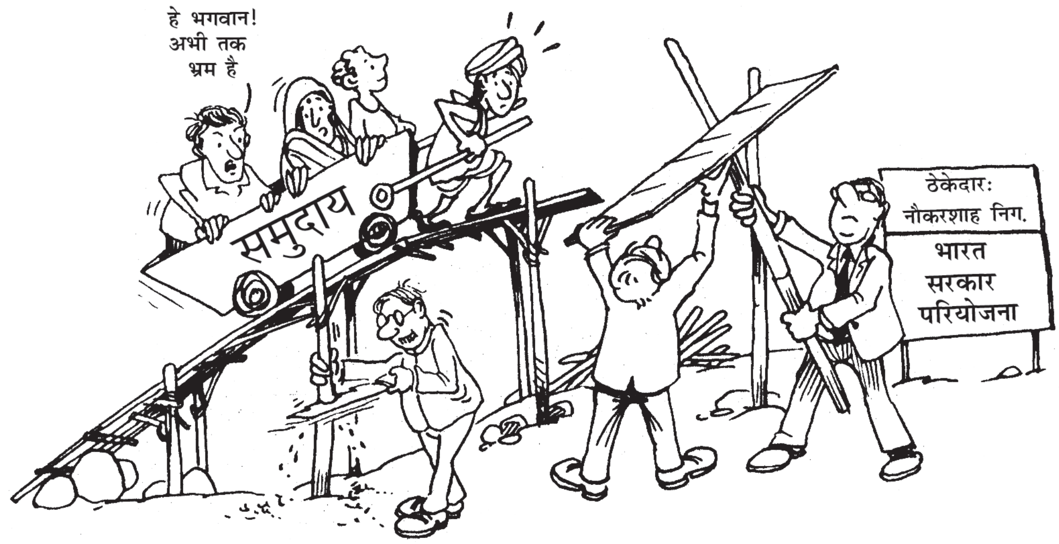

स्रोत – सिटिज़ंस फिफ्थ रिपोर्ट, सेंटर फॉर साइंस एंड इनवायरनमेंट (सी एस ई) नई दिल्ली।

अभ्यास अभ्यास अभ्यास अभ्यास अभ्यास

1. बहुवैकल्पिक प्रश्न

   (i) लौह अयस्क किस प्रकार का संसाधन है?

   (क) नवीकरण योग्य (ग) जैव
   (ख) प्रवाह (घ) अनवीकरण योग्य

   (ii) ज्वारीय ऊर्जा निम्नलिखित में से किस प्रकार का संसाधन है?

   (क) पुनः पूर्ति योग्य (ग) मानवकृत
   (ख) अजैव (घ) अचक्रीय

   (iii) पंजाब में भूमि निम्नीकरण का निम्नलिखित में से मुख्य कारण क्या है?

   (क) गहन खेती (ग) वनोन्मूलन
   (ख) अधिक सिंचाई (घ) अति पशुचारण

   (iv) निम्नलिखित में से किस प्रांत में सीढ़ीदार (सोपानी) खेती की जाती है?

   (क) पंजाब (ग) हरियाणा
   (ख) उत्तर प्रदेश के मैदान (घ) उत्तराखण्ड

(v) इनमें से किस राज्य में काली मृदा पाई जाती है?

(क) जम्मू और कश्मीर (ग) गुजरात

(ख) राजस्थान (घ) झारखंड

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिए।

(i) तीन राज्यों के नाम बताएँ जहाँ काली मृदा पाई जाती है। इस पर मुख्य रूप से कौन सी फसल उगाई जाती है?

(ii) पूर्वी तट के नदी डेल्टाओं पर किस प्रकार की मृदा पाई जाती है? इस प्रकार की मृदा की तीन मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?

(iii) पहाड़ी क्षेत्रों में मृदा अपरदन की रोकथाम के लिए क्या कदम उठाने चाहिए?

(iv) जैव और अजैव संसाधन क्या होते हैं? कुछ उदाहरण दें।

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 120 शब्दों में दीजिए।

(i) भारत में भूमि उपयोग प्रारूप का वर्णन करें। वर्ष 1960-61 से वन के अंतर्गत क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण वृद्धि नहीं हुई, इसका क्या कारण है?

(ii) प्रौद्योगिक और आर्थिक विकास के कारण संसाधनों का अधिक उपभोग कैसे हुआ है?

परियोजना/क्रियाकलाप

1. अपने आस पास के क्षेत्रों में संसाधनों के उपभोग और संरक्षण को दर्शाते हुए एक परियोजना तैयार करें।
2. आपके विद्यालय में उपयोग किए जा रहे संसाधनों के संरक्षण विषय पर अपनी कक्षा में एक चर्चा आयोजित करें।
3. वर्ग पहेली को सुलझाएँ; ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज छिपे उत्तरों को ढूँढें।

नोट : पहेली के उत्तर अंग्रेज़ी के शब्दों में हैं।

S	F	G	S	F	O	B	R	O	M	S	U	A	P	J
Q	G	A	F	F	O	R	E	S	T	A	T	I	O	N
P	N	R	E	C	P	R	S	L	D	M	I	L	N	F
S	N	A	T	Q	X	U	O	V	A	I	O	L	A	L
O	D	E	I	D	R	J	U	J	L	D	B	N	B	D
T	G	H	M	I	N	E	R	A	L	S	A	X	M	W
B	V	J	K	M	E	D	C	R	U	P	F	M	H	R
L	A	T	E	R	I	T	E	M	V	A	Z	T	V	L
A	B	Z	O	E	N	M	F	T	I	S	D	L	R	C
C	G	N	N	S	Z	I	O	P	A	X	T	Y	J	H
K	J	G	K	D	T	D	C	S	L	S	E	G	E	W

(i) भूमि, जल, वनस्पति और खनिजों के रूप में प्राकृतिक सम्पदा

(ii) अनवीकरण योग्य संसाधन का एक प्रकार

(iii) उच्च नमी रखाव क्षमता वाली मृदा

(iv) मानसून जलवायु में अत्यधिक निक्षालित मृदाएँ

(v) मृदा अपरदन की रोकथाम के लिए बृहत् स्तर पर पेड़ लगाना

(vi) भारत के विशाल मैदान इन मृदाओं से बने हैं।